



छेदप्रकाश

वेदोऽखिलो धर्म-मूलम्

भक्ति और भाव

हमारे यहाँ भक्ति तो है, पर उसकी असीम शक्ति कहीं दिखाई नहीं देती ; क्योंकि उसमें तीन छेद हैं । पहला छेद है—गाना । रात-रात-भर करताल और मजीरे बजा-बजाकर गाते रहना । यहाँ तो केवल गाना-ही-गाना है, आचरण में कुछ भी नहीं । दूसरा छेद है—रोना । हे राम, दुनिया में दुःख भरे पड़े हैं । पर सब केवल शब्दों में ही, किसी का दुःख दूर करने की कतई कोशिश नहीं की जाती । तीसरा छेद है—दिखावा । मस्तक पर त्रिपुण्ड तिलक, हाथ में माला, नियम से तीर्थ-यात्राएँ करना, ऐसे ही तमाम बाहरी दिखावों में डूबे रहना ।

ये तीनों छेद भर जायें, तो भक्ति की शक्ति प्रकट हो । भक्ति की शक्ति अपार है । लेकिन वह भाप की तरह है । भाप को अगर उड़ जाने दिया, तो वह किसी काम की नहीं ; पर यदि उसे संग्रह कर लें, तो बड़े-बड़े इंजन और लम्बी-लम्बी गाड़ियों को खींच ले जाती है । ज्ञान और कर्म दिखाई देने वाली चीजें हैं ; पर भक्ति दिखाई नहीं देती, दिखाई देनी भी नहीं चाहिए । प्रेम प्रदर्शन की चीज नहीं है । क्रिया-रूप में भले ही लोग उसे देख लें ।

—रविशंकर महाराज



स्वाध्याय उपयोगी पुस्तकें

मन की अपार शक्ति	प्रो० सुरेशचन्द्र वेदालंकार	१-२५
आकर्षक व्यक्तित्व कैसे बने ?	"	१-५०
हम सुखी कैसे रहें ?	पं० सत्यपाल शास्त्री	१-००
महर्षि दयानन्द जीवन चरित्र	पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति	१-५०
महर्षि दयानन्द	त्रिलोकचन्द्र विशारद	०-७५
दयानन्द चित्रावली	रामगोपाल विद्यालंकार	२-५०
रामचन्द्र देहलवी लेखावली	पं० रामचन्द्र देहलवी	३-५०
ईश्वर ने दुनियाँ क्यों बनाई ?	"	०-४०
गीत भण्डार	पं० नन्दलाल	३-००
व्याख्यान माला	स्वामी अच्युतानन्द	२-५०
वृहदारण्यक उपनिषद् कथामाला	स्वामी ब्रह्ममुनि	३-००
स्वेताश्वतर उपनिषद्	पण्डित भीमसेन	१-००
विवाह और विवाहित जीवन	पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय	२-५०
स्त्रियों का स्वास्थ्य और रोग	पं० अत्रिदेव विद्यालंकार	३-००
दर्शनानन्द ग्रन्थ संग्रह (उत्तरार्द्ध)	स्वामी दर्शनानन्द	२-५०
वेद परिचय	स्वामी वेदानन्द	०-३७
जीवन ज्योति	चमूपति एम० ए०	४-००
वाल ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका	पं० विश्वनाथ विद्यालंकार	०-७५
आर्य सिद्धान्त दीप	पं० मदनमोहन विद्यासागर	१-२५
गीत श्रद्धाञ्जलि	(भजन)	१-००
महिला पुष्पाञ्जलि	"	०-५०
हिन्दु संगठन	स्वामी श्रद्धानन्द	१-००
ओंकार व्याख्या	पं० अयोध्या प्रसाद	०-२०
नमस्ते की व्याख्या	पं० सुखदेव	०-२०
सत्य हरिश्चन्द्र नाटक	भारतेन्दु हरिश्चन्द्र	१-००
नास्तिकवाद	देवेन्द्रनाथ शास्त्री	०-५०

गोविन्दराम हासानन्द, ४४०८ नई सड़क, दिल्ली-६

॥ ओ३म् ॥

वेद प्रकाश

वर्ष १७ अङ्क ६	संस्थापक—गोविन्दराम हासानन्द वैशाख २०२६, अप्रैल १९६९	वार्षिक मूल्य ३-००
-------------------	---	-----------------------

सम्पादक : विजयकुमार

आदरी सम्पादक : ब्र० जगदीश विद्यार्थी

वेद प्रवचन

★ स्व० गंगाप्रसाद उपाध्याय

संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम् ।

देवा भागं यथापूर्वं संजानाना उपासते ॥

(ऋग्वेद १०-१९१-२ । अथर्ववेद ६-६४-१)

(तैत्तिरीय ब्राह्मण २-४-४-४)

अन्वय : हे मनुष्याः ! संगच्छध्वम् । संवदध्वम् । वः (युष्माकं) मनांसि संजानताम् । यथापूर्वं संजानानाः देवाः भाग उपासते ।

अर्थ : हे मनुष्यो ! तुम लोग (संगच्छध्वं) मिलकर चलो । (संवदध्वं) संवाद अर्थात् प्रेमपूर्वक आपस में बातें करो । (वः मनांसि) तुम्हारे मन मिलकर सत्यासत्य निर्णय के लिये (संजानताम्) विचार करें । जैसे (पूर्वदेवाः) प्राचीन काल के विद्वान् लोग (संजानानाः) परस्पर विचार करके सत्यासत्य का निर्णय करके (भागं) अपने-

अपने उपभोग के भाग को (उपासते) प्राप्त करते आये हैं। अर्थात् प्राचीन काल से विद्वानों की यह प्रथा चली आती है कि मन, वचन और कर्म से मिलकर रहें और प्रेम से निर्णय करके अपने-अपने हिस्से की चीजों का उपभोग करें।

व्याख्या—इस वेदमन्त्र में यह उपदेश दिया गया है कि मानव-समाज के निर्माण का मूलाधार क्या हो और निर्मित समाज की रक्षा कैसे हो तथा उससे किस प्रकार अधिक-से-अधिक लाभ उठाया जा सके।

‘संगच्छध्वं’, ‘संवदध्वं’ ‘वः मनांसि’ यह सब मध्यम पुरुष बहुवचन हैं। “आप लोग या आप के मन।” इससे स्पष्ट है कि यह ईश्वर की ओर से सब मनुष्यों के प्रति उपदेश है। या ऋषि, उपदेशक, आचार्य इस ईश्वर-उपदेश को जनसाधारण के लिये व्यक्त करते हैं। यह मन्त्र ऋग्वेद के अन्तिम सूक्त में आया है इसलिये भी प्रतीत होता है कि समस्त वेद में जो कुछ अब तक उपदेश दिया गया उसका निचोड़ यह है कि मनुष्य-समाज सर्वोत्कृष्ट हो। सम्बोधन मनुष्यों के प्रति है क्योंकि मनुष्य ही उपदेश को समझ सकते हैं और मनुष्यों के सामाजिक अनुशासन के द्वारा ही अन्य पशु-पक्षी लाभान्वित हो सकते हैं।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी (Gregarious animal) है अर्थात् यह समूह में रहना पसन्द करता है। यों तो मनुष्य के अतिरिक्त हिरन, सुअर, बैल, गाय आदि भी झुण्ड बनाकर रहते हैं; कौवे, कबूतर, चीटियाँ, मधु-मक्खियाँ झुण्डों में ही काम करती हैं। परन्तु मनुष्य-समाज को बनाना और और बनाकर उसे सुरक्षित रखना अत्यन्त कठिन है। इसके लिये बुद्धिपूर्वक योजनाओं की आवश्यकता पड़ती है। मधुमक्खियों का एक जैसा संगठन अनादि काल से चला आता है। उसके लिये किसी विशेष समाज-शास्त्र के निर्माण की आवश्यकता नहीं पड़ती। परन्तु मनुष्य-समाज को ठीक रखने के लिये नित्यप्रति हर देश और हर भाषा में नवीन शास्त्र रचे जाते हैं और यह निर्णय नहीं हो पाता कि समाज के निर्माण का श्रेष्ठतम साधन क्या हो। मनुष्य के परस्पर मिलने के तीन रूप हैं। साथ चलना, मिलकर वार्तालाप करना और मिलकर सोचना। इनमें पहला स्थूलतम है और पिछला सूक्ष्मतम।

‘गम्’ धातु से चलने के अर्थ में ‘गच्छत’ होना चाहिये था। परन्तु वेद ने ‘गच्छत’ (परस्मैपद) न कहकर आत्मनेपद ‘गच्छध्वं’ कहा और ‘सं’ उपसर्ग लगाकर अर्थों में विशेषता उत्पन्न कर दी। केवल इकट्ठे होने का नाम समाज नहीं है। लाखों मनुष्यों की भीड़ समाज नहीं है। दस आदमियों के सम्मिलन को भी समाज कह सकते हैं, यदि उसमें समाज के गुण हों। संस्कृत भाषा-विज्ञों ने ‘समज’^१ और ‘समाज’ शब्दों के अर्थों में भेद किया है। यदि बहुत-से पशु कहीं एक स्थान पर इकट्ठे हो जाते हैं तो उसको ‘समाज’ न कहकर ‘समज’ कहते हैं, ‘समज’ और ‘समाज’ के धातु तो एक ही हैं, परन्तु यह एक ही भाव के द्योतक नहीं। समाज के लिये योजना चाहिये।

“संगच्छध्वम्।—हे लोगो, साथ चलो।” साथ कैसे चलें? सबकी चाल बराबर नहीं। कोई तेज चलता है, किसी की गति मन्द होती है। मन्द गति वाला तेज कैसे चलेगा? उसमें सामर्थ्य नहीं, वेग वाला अपने वेग को क्यों कम कर दे? इससे क्या लाभ? परन्तु यदि सब ऐसा ही सोचें तो कोई समाज बन ही न सकेगा और समाज के न बनने से व्यक्ति भी समुन्नत होने में अशक्त होंगे। क्या कोई बीच का मार्ग है? है अवश्य! किसी फौज को मार्च करते हुए देखिये! हजारों सैनिक हैं, उन सबकी शक्तियाँ समान नहीं। उनका वेग समान नहीं। परन्तु उनका नियन्त्रण इस प्रकार का है कि जब एक का बायाँ पैर उठता है तभी सब का बायाँ पैर उठ जाता है। तेज चलने वाला सैनिक अपनी तेजी को रोकता है। सुस्त सैनिक कुछ विशेष यत्न करके तेज सैनिक का साथ देता है। तेज मनुष्य का आत्मनियन्त्रण सुस्त मनुष्य को प्रेरित करता है और उसके वेग में वृद्धि हो जाती है। यत्न और नियन्त्रण दो साधन हैं संगमन या साथ चलने के। इनसे तेज और सुस्त दोनों को लाभ पहुँचता है। जो सेना इस शुभ गुण से सम्पन्न नहीं होती वह सेना नहीं कहलाती और न वह शत्रु पर विजय प्राप्त कर सकती है। आपने बड़े-बड़े मेलों में देखा होगा कि पुलिस के नियन्त्रित बीस आदमी लाखों की भीड़ को भगा देते हैं। अतः वेदमन्त्र इस बात पर बल देता है कि किसी जाति या समाज की उन्नति का स्तर मनुष्यों की

१. ‘समज’ और ‘समाज’—(देखो पाणिनि सूत्र)

गणना या संख्या पर निर्भर नहीं है। उनमें ऐसा नियन्त्रण भी होना चाहिये कि वे परस्पर अपनी गतियों को समन्वित कर सकें।

गतियों को समन्वित करने का साधन है संवाद या मिलकर स्नेह-युक्त बात करना। तेल या घी को संस्कृत में स्नेह कहते हैं और स्नेह नाम प्रेम का भी है। स्नेहयुक्त वाणी चलने में समन्वय उत्पन्न कर देती है। सेनापति की बायें-दायें (left, right) की आवाज सुनकर ही सैनिकों के पैर साथ-साथ पड़ने लगते हैं। ड्रिल के आदेश मानो सम्वाद ही हैं। बाप अपने छोटे-से बच्चे को साथ लगाना चाहता है। बच्चा कहता है कि मैं तेज नहीं चल सकता। मुझमें सामर्थ्य नहीं। बाप उत्तर देता है, 'बच्चे, कुछ बात नहीं। मैं मन्द गति से चलूंगा, तू मेरी उंगली पकड़ ले।' बच्चा कुछ अपनी गति तेज करता है। सम्वाद से प्रेरणा मिलती है। जो तुम्हारा परमशत्रु है उसके साथ भी सम्वाद करने से शत्रुता कम हो जाती है। वाणी पैरों की प्रेरिका है। मनुष्य ही एक ऐसा प्राणी है, जो वाणी का ठीक-ठीक प्रयोग कर सकता है। पैर स्थूल हैं, वाणी सूक्ष्म है। परन्तु वाणी से भी सूक्ष्मतरंग है 'मन' इसलिये वेद-मन्त्र कहता है कि "वः मनांसि संजानताम्।" तुम्हारे मन साथ मिलकर विचार करें। विचार सबसे प्रबल वस्तु है। अतः समाज-निर्माण का सबसे उत्कृष्ट साधन परस्पर विचार करना है। भगड़ा विचारों के भेद से आरम्भ होता है। मैं कुछ सोचता हूँ, आप कुछ सोचते हैं तो बात-बात में भगड़ा हो जाता है। मत-भेद गाली-गलौच की जड़ है। और जब वाग्युद्ध आरम्भ हो गया तो स्थूल युद्ध के होने में कोई देर नहीं लगती। कौरव-पाण्डवों के विचार भिन्न-भिन्न थे। अतः जब द्रौपदी ने ताना मारा कि अंधों के अन्धे ही पैदा हुए तो कौरवों के हृदय में तीर-सा लगा और उन्होंने ठान ली कि चाहे जो कुछ हो पाण्डवों का नाश करना चाहिए। मत-भेद के कारण एक घर के लोग लड़ पड़ते हैं और घर नष्ट हो जाता है। छोटे-छोटे मत-भेद बड़े मत-भेदों को उत्पन्न कर देते हैं और थोड़ी-सी बात पर बड़ी-बड़ी लड़ाइयाँ हो जाती हैं। अतः मनुष्य-समाज के निर्माण का सबसे बड़ा साधन है बैठकर विचार-विनिमय करना। सभाएँ इसीलिए बनाई जाती हैं कि भिन्न-भिन्न विचारों के लोग अपना-अपना दृष्टिकोण प्रकट करें। ऐसा करने से

सन्धि का कोई-न-कोई उपाय निकल आता है। पहले से लड़ाई ठानने की इच्छा करने वाले लोग भी परस्पर विचार करने लगते हैं तो बहुधा अपनी जिद को छोड़ने के लिए उद्यत हो जाते हैं। राजनीति के क्षेत्र में परस्पर विचार-विनिमय (negotiations) को बहुत बड़ा महत्व दिया गया है। और संसार का इतिहास बताता है कि प्रायः जन-संहार को रोकने और मानव-समाज को सुरक्षित रखने में 'संवदध्व' का उपदेश बड़े काम की चीज है।

जब मनुष्य परस्पर विचार करने लगता है तो उसको स्वहित और पर-हित के समन्वय का ज्ञान हो जाता है। प्रत्येक स्वार्थ में स्वभाव के स्थान में स्वहानि छिपी रहती है। यदि विचार-विनिमय का अवसर मिले तो यह छिपी हुई हानि प्रकट हो जाती है और मनुष्य परहित के गौरव को भी अपने विचारों में स्थान देता है।

मन्त्र के अन्तिम चरणों में उदाहरण देकर देव और साधारण मनुष्यों के कामों की शैली में भेद बताकर यह सिद्ध किया है कि एक मार्ग मूर्खों का है और दूसरा विद्वानों का। इस सृष्टि में हिस्सा तो सभी का है—मूर्खों का भी और विद्वानों का भी। दोनों प्रकार के लोगों को जीवन-यात्रा करनी है। दोनों को साधनों की आवश्यकता है। दोनों को भाग चाहिये। परन्तु विद्वानों और अविद्वानों में अपने-अपने भाग के प्राप्त करने के अपने-अपने ढंग हैं। 'देवाः भागं यथा पूर्वं संजानाना उपासते' अर्थात् प्राचीन देवगण एक-दूसरे की भावनाओं को समझकर उनका आदर करते हुए अपने भागों को प्राप्त करते चले आये हैं। यहाँ 'पूर्वं' (सर्वनाम) 'देवाः' का विश्लेषण है। परन्तु यह समस्त व्यापार की विशेषता प्रकट करता है। इसका अर्थ है "यथापूर्वं।" अर्थात् आदिकाल से देवों का यह स्वभाव रहा है कि साथ चलें, साथ संवाद करें और साथ मिलकर विचार करें। मूर्ख केवल अपना हित देखता है। विद्वान् पराये हित में अपना हित समझता है। अतः जब वह दूसरों का हित करने लगता है तो दूसरे उसी का अनुकरण करके उसका हित करते हैं। अतः सर्वत्र सर्वथा और सर्वदा सबका हित होता है और समाज समुन्नत होता है। मूर्ख अपना हित चाहता है। श्रीरों के साथ स्पर्धा, खींचातानी और

संघर्ष चलता है। सब एक-दूसरे को हानि पहुँचाने का यत्न करते हैं। हर तरफ से हानि पहुँचाने की प्रबल इच्छा और प्रयत्न हो तो समाज हानियों का मन्दिर बन जाता है। ऐसा समाज कैसे स्थापित और सुरक्षित रखा जा सकता है। शतपथ ब्राह्मण में इसी तथ्य को बड़ी उत्तमता से वर्णन किया है—

देवाश्च वा असुराश्च । उभये प्राजापत्याः पस्पृधिरे । ततोऽसुरा अतिमानेनैव कस्मिन्नु वयं जुहुयामेति स्वेष्वेवास्येषु जुह्वतश्चेरुस्ते अतिमानेनैव परावभूवुः तस्मान्नातिमन्येत पराभवस्य हैतन्मुखं यदतिमानः ।

अथ देवाः । अन्योऽन्यस्मिन्नैव जुह्वतश्चेरुस्तेभ्यः प्रजापतिरात्मानं प्रददौ । यज्ञोहैपामास । यज्ञो ह देवानामन्नम्, (शतपथ ब्राह्मणम् । काण्ड ५, अध्याय १, ब्राह्मण १)

प्रजापति के दो सन्तान हैं अर्थात् देव और असुर। मनुष्यों की दो कोटियाँ सदा से प्रसिद्ध हैं। अच्छे या देव और बुरे या असुर। देवों और असुरों में कभी वनती नहीं। वे भगड़ने लगे। असुरों ने चाहा कि आहुतियाँ अपने-अपने ही मुँह में ही डालें। अतः वे नष्ट हो गये। क्योंकि 'अतिमान' अर्थात् स्वार्थ पराभव का मुख या हेतु है। देवों ने एक दूसरे के मुख में आहुतियाँ दीं। वे जीत गये। क्योंकि एक-दूसरे की भलाई में तत्पर रहने का नाम ही यज्ञ है। यज्ञ उसी का है जो परहित की भावना रखता है। जो स्वार्थी है वह यज्ञ कर ही नहीं सकता। समाज का निर्माण यज्ञ से होता है। यज्ञ का अर्थ है परोपकार, इससे सबको अपना-अपना भाग मिल जाता है। यह देवों की प्रथा है, यही देव-मार्ग है।

इतिहास इसी तथ्य का साक्षी है। वर्तमान भारतवर्ष के समक्ष दो इतिहास उपस्थित हैं—एक देवों का दूसरा असुरों का। रामायण पर दृष्टि डालिये ! राजा दशरथ के चार पुत्र हैं। राज्य-रूपी आहुति किसके मुख में डाली जाय। राम कहते हैं भरत के मुख में। भरत कहते हैं राम के मुख में। परिणाम यह होता है कि राज्य सभी का हो जाता है और अनन्त काल तक समाज के लिये एक आदर्श बन जाता है। 'रामराज्य' के लिये आज भी लोग तड़पते हैं। परन्तु हर एक राज्य को अपने ही मुख में डालना चाहता है। शतपथ की गाथा कहती है "पराभवस्य हैतन्मुखं यदतिमानः" अतिमानः का

अर्थ है अत्याचार । अत्याचार का अर्थ है स्वार्थ । जो भोजन पा जाओ उसको अपने मुख में ही डाल लो—यह तो रामराज्य नहीं होता । इसके विपरीत दूसरा उदाहरण है । भारत के मुगल सम्राट् शाहजहाँ का । उसके भी चार लड़के थे और भारतवर्ष का बड़ा साम्राज्य था । चारों ने उसको हड़पने का यत्न किया । चारों ने अपने-अपने मुँह में आहुतियाँ डालीं । यह तो देवों की प्रथा नहीं थी, असुरों की प्रथा थी । शास्त्र की बात ठीक सिद्ध हुई कि अतिमान पराभव का मुख है । न केवल चारों पुत्र ही प्रनष्ट हुए, मुगल राज्य की श्री सदा के लिये लोप हो गई और मानव-जाति के इतिहास में एक बड़ी दूषित मिसाल छोड़ गई ।

हर घराने, हर सम्प्रदाय, हर जाति और हर देश में ऐसे उदाहरण मिलेंगे । तुलसीदास ठीक कहते हैं :—

जहाँ सुमति तहँ सम्पत् नाना ।

जहाँ कुमति वहाँ विपद् निधाना ॥

सुमति का अर्थ ही है “संशो मनांसिजानताम्” परस्पर मिलकर विचार करो । विचारों से वाणी शुद्ध बनेगी और वाणी से कार्यों में एकता आयेगी । ऋग्वेद के इसी अन्तिम सूक्त के अगले मन्त्रों में इसी मूलमंत्र के व्याख्या-रूप उपांगों का वर्णन है जैसे “समानो मंत्रः”, हमारे निर्णय समान हों । “समितिः समानी”, सभा संयुक्त हो । समानं मनः (मन एक हो) । “सह चित्तमेषाम्” चिन्तन में समन्वय हो । “समानी वः प्राकूतिः” हमारी विचारधारा एक साथ चलने वाली हो । इत्यादि-इत्यादि ।

सन्ध्या हवन की पुस्तकें

पंचयज्ञ प्रकाशिका

[सन्ध्या, हवन, स्वस्तिवाचन शान्ति

प्रकरण शब्दार्थ सहित]

०-७५

आर्य सत्संग गुटका

[सन्ध्या हवन मोटे अक्षर]

०-४०

वैदिक यज्ञ प्रकाश

०-२०

हवन मन्त्र

०-१५

सन्ध्या मन्त्र

१०-१०

सत्संग गुटका

(छोटा साइज) ६४ पृष्ठ

१०-२०

गोविन्दराम हासानन्द नई सड़क, दिल्ली ।

मूर्खा

★ पाण्डेय वेचन शर्मा 'उग्र'

अम्मा का नाम गुलाबो, मुंह देखो तो छुहारा, आकृति घनुष की तरह । गुलाबो अम्मा की अवस्था अस्सी और पाँच पचासी वर्ष ।

अम्मा का खासा परिवार । बेटे तीन—राम, काम और दाम जिनके 'लघु' नाम । पूर्ण नाम रामेश्वर, कामेश्वर और दामोदर । रामेश्वर कांग्रेसी, कामेश्वर कम्युनिस्ट तथा दामोदर हिन्दू-सभाई ।

मगर, कहानी यह राजनीतिक दुर्भावना प्रधान नहीं; सामाजिक भावना-प्रधान है । घर में एक गाय को लेकर काफी कलह । उस गाय को कामेश्वर या कम्युनिस्ट लड़के ने बारह साल पहले तीस रुपये में खरीदा था । दस साल उसने, बराबर सारे परिवार को, तीन सेर रोजाना से लेकर आठ सेर रोजाना दूध पिलाया । उसके छः बच्चे, छोटी उग्र में ही, कुल मिला कर ढाई सौ रुपये में बेच दिये गये और चार बछियाएँ डेढ़ सौ रुपये में । पर, अब, उस गाय में कोई तत्व नहीं; टटरी-मात्र रह गई है । बुढ़ापे से धुँधली, कीचमयी आँखें । किसी को भी अब उससे कोई उम्मीद नहीं । सबको अब वह द्वार की कुशोभा और गन्दगी फैलाने वाली मालूम पड़ती है ।

केवल गुलाबो अम्मा उस गाय की पक्षपातिनी—और प्रचण्ड । बिना उनके प्राण निकाले क्या मजाल जो कोई गौमाता को घर से बाहर निकाल देता ! जवानी में दूध किसी ने पिया हो ; पर बुढ़ापे में, गाय के लिए अपना खून-पानी करने वाली है, तो गुलाबो अम्मा । मुंह देखो, तो छुहारा, आकृति घनुष की तरह । गुलाबो अम्मा अस्सी-पाँच पचासी वर्ष की वय में जैसी बूढ़ी, वैसी ही वह गाय, पन्द्रह वर्ष की अवस्था में ।

“इसे बेच दें अम्मा ?” कम्युनिस्ट ने आज्ञा चाही ।

“इसे खरीदेगा कौन ? यह न तो अब फलेगी, न दूध ही देगी ।” अम्मा

ने बेचने की भावना को अनुत्साहित किया। पर, कम्युनिस्ट अर्थ-पिशाच-युग का प्राणी।

‘कसाई इसे हँसी-खुशी से पच्चीस-तीस रुपये में ले लेगा अम्माँ !’ और अपनी कोख में जन्मे पूत के मुँह से ऐसी घातक बात सुनने के बाद अम्माँ ने तीन दिन, तीन रात अन्न और जल ग्रहण नहीं किया।

कांग्रेसी बेटा रामेश्वर या राम ने एक दिन समझाया—“अम्माँ, जमाना महँगाई का है और इस गाय पर रुपया-सवा-रुपया रोज़ खर्चा पड़ जाता है। इसे ‘पिंजरापोल’ पठा दें, तो कोई आपत्ति है तुम्हें ? यह यहाँ से वहाँ अधिक सुख में रहेगी।”

“जमाना महँगाई का है, तो मुझे भी किसी ‘पिंजरापोल’ में भरती करा दे। दूध पिया हमारे परिवार ने, सेवा करे ‘पिंजरापोल’। यह भी कोई इन्साफ़ है ? इस पर एक रुपया रोज़ परिवार नहीं खर्च कर सकता, तो मैं आधा पेट खाऊँगी और मेरे पेट का आधा यह खायेगी।”

और सारा घर खुशामदें करते-करते हार गया, पर, उस दिन के बाद गुलाबो अम्माँ ने कभी दोनों जून जमकर नहीं खाया।

हिन्दू-सभाई या छोटा लड़का दामोदर सबसे चढ़ निकला। उसने तय किया गुलाबो अम्माँ के सो जाने पर, आधी रात में गाय को नगर की सीमा के बाहर हाँक आने का। उसने अम्माँ अनजान को तो धोखे में रखा, पर ऐन वक्त पर वह गाय गोया उसके बद-इरादे को ताड़ गई और बन्धन में हाथ लगाते ही बाँ-बाँ कर मानो गुलाबो अम्माँ को पुकारने लगी। अम्माँ भी पुकार सुनते ही गाय के थान पर।

“क्यों रे ! यह क्या कर रहा है ?”

“अम्माँ !” खीझ-भरे स्वर में हिन्दू-सभाई लड़के ने कहा, “इसके सारे सारे घर में गन्दगी, जिधर देखो गोबर-ही-गोबर। सीधे से तुम इसे कभी न निकालतीं, सो, मैंने सोचा रातोंरात बाहर हाँक आऊँ।”

“किसके भाग्य कि सारे घर में गोबर-ही-गोबर नज़र आये ? अभाग ! गोबर में लक्ष्मी का निवास है। मैं आज अन्तिम बार कहे देती हूँ।

गाय घर से बाहर निकली और दाना-पानी छोड़, मैंने प्राण देने का निश्चय किया। मेरी जिन्दगी में ऐसी वेइन्साफ़ी नहीं हो सकती कि जिसने हमारे लिए सारी जिन्दगी खून का पानी नहीं, दूध बनाया; उस अनबोलते पशु को बुढ़ापे में घर से बाहर निकाल दिया जाए। यह भी परिवार का प्राणी है, काल-गति से वैसे ही कमजोर बनी हुई, जैसे कि मैं हूँ।”

गुलाबो अम्मा के आर्य-इन्साफ़ के रोव से थरकितर दामोदर चोरों की तरह चुपके से जब टरक गया तब अम्मा ने गाय की तरफ करुण दृष्टि से देखा और गाय ने अम्मा की तरफ कृतज्ञ दृष्टि से। वह पशु-भावना से भभरकर काँपी या सहज ही उसकी चमड़ी में कम्पन हुआ, पर अम्मा ने समझा कि उसको टण्ड लग रही है। रातें भी तो पूस-माह की हैं।

और इसका मुझे ध्यान ही न रहा। मैं भी कैसी मूर्खी...

वह झपटी हुई अपने सोने वाली कोठरी में गई। उसके ओढ़ने के कम्बल दो थे। एक साबुत, दूसरा पुराना, भिल्लड़। पहले अम्मा ने भिल्लड़ कम्बल उठाया, फिर, कुछ सोचकर रुकी—‘जिसने अपने बच्चों का पेट काटकर मेरे बच्चों को दूध पिलाया उसे भिल्लड़ नहीं, अच्छा कम्बल ही ओढ़ाना सनातन धर्म है—कम-से-कम जब तक मैं जिन्दा हूँ। मेरे वाद चाहे जो भी हो।’

गाय को उत्तम कम्बल ओढ़ा, स्वयं भिल्लड़ ओढ़े, सोने की कोठरी की तरफ लौटती हुई पीछे मुड़कर गुलाबो अम्मा ने यह ताड़ने की चेष्टा की कि अब तो वह काँप नहीं रही। गाय ने भी विचित्र सुख और अपनत्व से अम्मा की तरफ देखा। अम्मा की आँखों में करुणा थी, गंगा की तरह। गऊ की आँखों में कृतज्ञता थी, मुक्ति की तरह।

दयानन्द सूक्ति और सुभाषित

संकलनकर्ता एवं सम्पादक—ब्र० जगदीश विद्यार्थी एम० ए०

महर्षि दयानन्द के छोटे-बड़े सभी ग्रन्थों का नवनीत। ३०० विषयों पर महर्षि दयानन्द के विचार। प्रत्येक घर और पुस्तकालय में रखने योग्य। छपाई आदि सुन्दर। सजित् पुस्तक का मूल्य केवल ४-००।

गोविन्दराम हासानन्द, नई सड़क, दिल्ली-६

आयु और स्वास्थ्य

रूस के प्रसिद्ध डाक्टर प्रोफेसर वोगडेनेव अभी हाल ही में ब्रिटेन आये थे, जहाँ उन्होंने अपनी एक वक्तृता में कहा कि रूस में कितने ही ऐसे व्यक्ति हैं जिनकी आयु १४० वर्ष से अधिक हो चुकी है और जिन्होंने प्रथम नेपोलियन को मास्को पर हमला करते देखा था। यह पूछे जाने पर कि आखिर रूस के लोगों की इस लम्बी आयु का कारण क्या है ? उन्होंने कहा कि मैं कुछ भी नहीं बता सकता, तब इतना पता लगता है कि 'अगर मनुष्य साठ से पचहत्तर वर्ष तक की उम्र निर्विघ्न बिता ले तो फिर उसकी सौ वर्ष अथवा उससे अधिक आयु हो जाने की सम्भावना बहुत बढ़ जाती है। इसका कारण यह जान पड़ता है कि ६० से ७५ वर्ष की आयु के बीच में मनुष्य के शरीर के अन्दर कई बड़े विचित्र परिवर्तन हो जाते हैं। बुढ़ापे की कुछ साधारण बीमारियाँ जैसे ब्लड प्रेशर, चर्बी जमा होना, नसों और नाड़ियों का सूखना, रक्त के लाल और सफेद कणों की गड़बड़ी, अथवा आँतों का ठीक से काम न करना आदि बातें जो बुढ़ापे और अन्त में मृत्यु के प्रधान कारण बनती हैं, इसी ६० से ७५ तक की आयु के बीच में अधिक होती हैं। ७५ की आयु डाक लेने पर यह सब दोष अगर शरीर में आ भी गये हों तो आगमे-आप ही फिर ठीक भी होने लगते हैं और मनुष्य स्वस्थ होने लगते हैं। एक हजार बुढ़े व्यक्तियों की डाकटरी परीक्षा करने पर प्रायः सभी में ही यह बात ठीक बात पाई गई, जिससे हम लोगों को यह सिद्धान्त बनाना पड़ा है। डाक्टर वोगडेनेव की इस बात पर अमेरिका और इंगलैण्ड के डाक्टरों ने भी कमेटियाँ बैठाईं और इस दिशा में जाँच शुरू कर दी। उनकी खोजों का भी यही नतीजा निकला और अब यह साधारण तौर पर विश्वास किया जाता है कि अगर ७५ की आयु मनुष्य पार कर ले तो फिर १०० का होने की उसकी सम्भावना बहुत बढ़ जाती है। ●

हमारी प्रकाशित व प्रसारित पुस्तकें

महात्मा आनन्द स्वामी कृत	विद्यार्थियों की दिनचर्या	१-५०
तत्त्वज्ञान ३-००	दिव्य दयानन्द	१-२५
प्रभुदर्शन २-५०	प्रार्थना प्रकाश	१-२५
प्रभुभक्ति १-५०	प्रभात वन्दन	१-२५
आनन्द गायत्री कथा ०-७५	हास्य विनोद	१-००
एक ही रास्ता १-००	विष्णु पुराण की आलोचना	०-४०
शंकर और दयानन्द ०-५०	राधा स्वामी मत दर्पण	०-२५
सत्यनारायण व्रत कथा ०-७५	ऋग्वेद शतकम्	१-००
भक्त और भगवान १-००	यजुर्वेद शतकम्	१-००
मानव जीवन गाथा १-००	सामवेद शतकम्	१-००
उपनिषदों का सन्देश १-५०	अथर्ववेद शतकम्	१-००
घोर घने जंगल में २-५०	महर्षि दयानन्द कृत	
महामन्त्र १-२५	आत्मकथा	०-४०
सुखी गृहस्थ १-००	स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश	०-१०
बोध कथाएँ प्रथम भाग १-५०	वेदान्तिध्वान्त निवारण	०-१६
बोध कथाएँ द्वितीय भाग १-५०	वेदविरुद्ध मत खण्डन	०-३७
बोध कथाएँ दोनों भाग एक ३-५०	शिक्षापत्रीध्वान्त निवारण	०-३७
जिल्द में	आर्याभिविनय	०-७५
ब्र० जगदीश विद्यार्थी कृत	आर्योद्देश्यरत्नमाला	०-१०
विद्यार्थी लेखावली ३-००	ऋग्वेद भाष्य का प्रथम सूक्त	०-२५
दयानन्द सूक्ति और सुभाषित ४-००	भ्रान्ति निवारण	०-२७
वैदिक प्रश्नोत्तरी २-००	व्यवहारभानु	०-२५
वेद सौरभ २-००	भ्रमोच्छेदन	०-१५
ईशोपनिषद् २-००	गोकरुणानिधि	०-२०
वैदिक उदात्त भावनाएँ २-००	गृहस्थाश्रम	०-६२
कुछ करो कुछ बनो २-००	काशी शास्त्रार्थ	०-२०
मर्यादा पुरुषोत्तम राम १-५०	सत्यधर्म विचार	०-२५

गोविन्दराम हासानन्द, ४४०८ नई सड़क, दिल्ली-६

हमारी प्रकाशित व प्रसारित पुस्तकें

प्रार्थसमाज के नियमोपनियम	०-१०	वैदिक सन्ध्या रहस्य	०-३७
ईशोपनिषद्	०-२५	वैदिक यज्ञ रहस्य	०-३७
बालशिक्षक	०-३७		
यजुर्वेदमूल संहिता सजिल्द	२-५०	प्रो. सत्यभूषण योगी कृत	
प्रो० नित्यानन्द वेदालंकार		योगी की मधुशाला	१-००
पूर्व और पश्चिम	७-५०	योगी का वीर काव्य	२-५०
जीवन की राहें	४-००	योगी का सोऽहं काव्य (ईशोपनिषद्)	५-२५
प्रार्थना दीप	२-००	स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती कृत	
सन्ध्या विनय	१-५०	वेदों का महत्त्व	०-२५
सु-राज्य की रूपरेखा	०-५०	बालशिक्षा	०-१५
पं० भगवद्दत्त कृत		धर्म शिक्षा	०-१०
भारतवर्ष का इतिहास दोभाग	३८-००	ईश्वर प्राप्ति	०-१६
वेदविद्यानिदर्शन	१२-५०	ईश्वर विचार	०-१२
भारतीय संस्कृति का इतिहास	६-००	धार्मिक चित्र और फोटो आदि	
भाषा का इतिहास	८-००	महर्षि दयानन्द रंगीन	१-२५
निरुक्त	१५-००	साइज २० × ३०	
आर्य राजनीति के मूल तत्त्व	०-३०	महात्मा हंसराज	१-००
पं० आर्य मुनि कृत		पं० लेखराम	१-००
ईश-उपनिषद्	०-४०	स्वामी दर्शनानन्द	१-००
केन-उपनिषद्	०-५०	पं० गुरुदत्त	१-००
प्रश्न	०-७५	साइज १८ × २२	
मुण्डक	०-३१	महर्षि दयानन्द	०-७५
माण्डूक्य	०-६२	गुरु विरजानन्द	०-७५
एतरेय	०-५०	स्वामी श्रद्धानन्द	०-७५
तैत्तिरीय	१-२५	पं० लेखराम	०-७५
महात्मा नारायण स्वामी कृत		ला० लाजपतराय	०-५०
आर्य समाज क्या है	०-७५	साइज १५ × २०	
गोविन्दराम हाताजन्द	०-७५	दिल्ली-६	

अप्रैल १९६९

वेदप्रकाश

रजि० नं० डी० २००

हमारी प्रकाशित व प्रसारित पुस्तकें

महर्षि दयानन्द	त्रिलोकचन्द्र विशारद	०-७५
स्वामी श्रद्धानन्द	"	०-३७
गुरु विरजानन्द	"	०-५०
आदर्श सुधारक दयानन्द	देवेन्द्रनाथ मुखर्जी	०-६२
गुरुधाम एकांकी	चन्द्रनारायण सक्सेना	०-५०
गीतावचनामृत	विष्णुमित्र	०-३७
आर्यसमाज के नियमों की व्याख्या	स्वामी सत्यानन्द	०-५०
ब्रह्मचर्य जीवन	पं० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार	०-५०
वैदिक धर्म शिक्षा	पं० शिव शर्मा	०-२५
गोरक्षा परम कर्तव्य	पं० धर्मदेव वि० मा०	०-५०
आप क्या नहीं कर सकते ?	स्वेट मार्डन	१-००
चिन्तामुक्त कैसे हों ?	"	१-००
हँसते-हँसते कैसे जियें ?	"	१-००
जो चाहें सो कैसे पायें ?	"	१-००
अपना खर्च कैसे घटायें ?	"	१-००
अवसर को पहचानो	"	१-००
अपने आप को पहचानो	"	१-००
सिगरेट बीड़ी कैसे छोड़ें	नरेन्द्रनाथ	१-००
हंसना मना है	योगेन्द्र कुमार	१-००
ढोल की पोल	चिरंजीत	१-००
दो सौ स्मॉल स्केल इण्डस्ट्रीज	रवि श्रीवास्तव	२-००
एक लाख नौकरियाँ	अरविन्द	२-००
स्वतलाना	क्षितीश	२-००
मुझे याद है	विमल मित्र	३-५०
अष्टोत्तर शतनाम मालिका	विद्यासागर वेदालंकार	६-००
गंगोत्री दर्शन	महावीरसिंह गहलोत	४-००

गोविन्दराम हासानन्द, ४४०८ नई सड़क, दिल्ली-६

मुद्रक, प्रकाशक, विजयकुमार ने सम्पादित कर बदलिया प्रिंटिंग प्रेस,
दाईवाड़ा दिल्ली में मुद्रित कर वेदप्रकाश कार्यालय,
४४०८ नई सड़क, दिल्ली से प्रकाशित किया ।